दिव्य सान्निध्य

लेखक

सुरेशानन्द कोठियाल

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगरह्वह्व२४९ १९२

जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण : २०१४
(१,००० प्रतियाँ)

द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

निःशुल्क वितरणार्थ

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल,
उत्तराखण्ड, पिनह्न२४९ १९२' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit : dlsbooks.org

ABOUT THE AUTHOR

Sri Chiranjilal Kothiyal and Sri Sureshanand Kothiyal are brothers. They were born in Banali village which is situated on the way to Kunjapuri Devi. Worshipful Swami Chidanandaji Maharaj visited this village once or twice.

Both of them lived in the Ashram for a number of years in the fifties. The elder brother Sri Chiranjilalji used to work in the Photo Studio, and his brother Sri Sureshanand Kothiyal used to work as a carpenter in the Ashram.

Both of the brothers were close to revered Sri Swami Chidanandaji Maharaj, and especially Sri Sureshanand conceived a special love for Swamiji. In November 1963, after revered Sri Swami Chidanandaji Maharaj had become the President of The Divine Life Society, he accompanied Swamiji to the holy shrine of Kedaranath in the Himalayas.

This booklet relates the difficult experiences they underwent during the pilgrimage. I am sure the reader will find the story fascinating.

Sivananda Ashram — Swami Vimalananda

January 24th, 2014 — President, D.L.S. Hqrs.

भूमिका

श्री राम जय राम जय जय राम

प्रातःस्मरणीय परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की महान् कृपा से समय-समय पर लेखक को उनकी दिव्य सन्निधि में रहने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन अमूल्य क्षणों की स्मृति-निधि से कुछ मोती चुन कर लेखक ने अपने संस्मरण लिखे जिन्हें श्री स्वामी जी महाराज के जन्म-शती-समारोह के उपलक्ष्य में प्रकाशित किया जा रहा है।

सुदुर्लभ सौभाग्य-प्राप्त लेखक सुरेशानन्द कोठियाल जी गुरु महाराज के अनन्य भक्त हैं। अपने अग्रज श्री चिरंजीलाल जी की प्रेरणा से बढ़ई का कार्य सीख कर यहीं आश्रम में ही कार्य करते हुए निवास करने का इन्हें सुअवसर प्राप्त हुआ। तभी से श्री स्वामी जी महाराज से इन्हें मातृ-पितृ वात्सल्य प्राप्त होता रहा तथा उनकी निजी सेवा का भी कभी-कभी इन्होंने लाभ उठाया।

पैतृक गाँव बनाली में इनके घर पहुँच कर महाराजश्री ने केवल इनके परिवार को ही नहीं, अपितु पूरे गाँव को धन्य कर दिया। समीपस्थ सिद्धपीठ कुंजापुरी मन्दिर में वर्षों से की जाने वाली पशु-बलि-प्रथा को श्री स्वामी जी महाराज की प्रार्थना एवं प्रयास द्वारा समाप्त करने का वृत्तान्त अति रोमांचक है।

सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और हतप्रभ करने वाला संस्मरण तो हैह्लह्लपरमाध्यक्ष मनोनीत होने पर श्री स्वामी जी महाराज की नवम्बर १९६३ में श्री केदारनाथ भगवान् के दर्शनार्थ यात्रा का। आश्रम में लेखक के अतिरिक्त और किसी को इसकी खबर न थी। उन दिनों यात्रा अत्यन्त कष्टकर होती थी। बर्फीला मौसम, वहाँ पहुँचे तो हिमपात हो रहा था। रात्रि-विश्राम के लिए स्थान मिलना असम्भव-सा प्रतीत हो रहा था। प्रभु-कृपा से पण्डा श्री

मथुराप्रसाद तिवारी जी ने अत्यन्त स्नेहपूर्वक श्रद्धा सहित आवभगत की। श्री स्वामी जी महाराज ने अपना परिचय अज्ञात रखना चाहा। एक सामान्य साधुरूप में दो रात्रियाँ वहाँ व्यतीत कीं। श्री केदारनाथ भगवान् के श्रीचरणों की सेवा के फलस्वरूप पण्डा जी को अन्तर्ज्ञान से उनकी महानता का पता चल रहा था और वे अपने को कृतार्थ अनुभव कर रहे थे।

सरल भाषा में लिखी इन घटनाओं की विस्तृत जानकारी सहित बोधप्रद एवं प्रेरणाप्रद पुस्तिका से सभी लाभान्वित होंगे, ऐसा ही विश्वास और पूर्ण आशा है। परम पिता परमात्मा तथा सद्गुरु भगवान् लेखक व इनके परिवार पर सदैव कृपा-वर्षण करते रहें! जय गुरुदेव!

श्री राम जय राम जय जय राम।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

दिव्य सान्निध्य

ॐ सच्चिदानन्दाय नमः

शिवानन्द आश्रम के शिवानन्द आर्ट स्टूडियो में श्री स्वामी शारदानन्द जी महाराज के साथ मेरे बड़े भाई साहब चिरंजीलाल जी कार्य करते थे। मैं, पितृ-विहीन बालक, पारिवारिक आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण कुछ कार्य सीखने की तमन्ना से अपने पैतृक गाँव बनाली से बड़े भाई साहब के साथ आश्रम पहुँचा। उन्होंने मुझे छः महीने तक अपने ही साथ आश्रम में रखा, अतः यहीं से मुझे परम पूजनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के सान्निध्य में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। छः माह के बाद बढ़ई (Carpenter) का कार्य सिखाने का निर्णय मेरे अग्रज द्वारा लिया गया। इस प्रकार मैं उस कार्य में प्रशिक्षण लेने हेतु आश्रम से ही 'ऋषिकेश' आने-जाने लगा। इस कारण मुझ जैसे अबोध एवं अशिक्षित बालक को महाराज श्री के दर्शन-लाभ के साथ-साथ उनका असीम मातृ-पितृ प्यार मिला जो कि परम पिता परमात्मा की असीम कृपा से आज तक यथावत् है और यह मेरे लिए बड़े ही अमूल्य सौभाग्य की बात है।

मैं लगभग दो वर्ष का था। मेरे पिता जी का स्वर्गवास हो चुका था, जिससे मुझे सिर्फ माता जी की ममता एवं प्यार का ही अनुभव था। गाँव से आश्रम पहुँचने पर मुझे यह ममता-भरा प्यार परम पूजनीय महाराज श्री से ही मिला। जिस प्रकार मलयागिरी की भीलनी अपनी अज्ञानतावश चन्दन का महत्त्व नहीं समझती है, उसी प्रकार महाराज श्री के सम्पर्क में रहते हुए भी मैं उनकी महानता से अनभिज्ञ था।

गाँव में जिस मकान में हमारा परिवार रहता था, वह करीबन पाँच पुश्त पुराना था और जीर्ण-शीर्ण अवस्था में था। उस वक्त हमारे घर में किसी अतिथि के बैठने के लिए मामूली आसन भी उपलब्ध नहीं था, लेकिन यह मेरे परिवार ही नहीं पूरे गाँव के लिए सौभाग्य की बात थी कि महाराज श्री ने अपनी प्रथम विदेश-यात्रा से पूर्व मेरे गाँव आ कर अपनी चरणधूलि से मेरा वह सैकड़ों वर्ष पुराना जीर्ण-शीर्ण घर पवित्र कर, साथ ही वहाँ पर कीर्तन कर मेरा घर ही नहीं पूरा गाँव धन्य किया। इसी समय मेरी पूज्य माता जी, जो कि अपनी पाँच वर्ष की बाल्यावस्था में ही मातृ-विहीन हो चुकी थी, ने श्रद्धेय महाराज श्री में माँ की ममता का अनुभव किया तथा वे परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज का दर्शन कर गद्‌गद हो गयीं।

जब मेरे पूज्य पिता जी का कम ही उम्र में स्वर्गवास हुआ था, उस समय मेरी माता जी की आयु सिर्फ २४ वर्ष थी। उन पर हम तीन भाइयों व एक बहिन के पालन-पोषण का भार उस समय ही आ पड़ा था। उस वक्त उनका स्वास्थ्य ठीक होने के कारण वे ईश्वर की कृपा से इस भार को बड़े धैर्य एवं साहस से उठाती रहीं। परन्तु सन् १९५१-५२ में एकाएक उनके पेट में असहनीय वेदना हुई तथा डाक्टरों की राय में इस रोग का उपचार मेजर आपरेशन से ही सम्भव था। पूज्य स्वामी जी महाराज के सम्पूर्ण सहयोग से दून अस्पताल में यह आपरेशन सम्पन्न हुआ और मेरी माता जी को नया जीवन मिला, जिसे वे जीवन पर्यन्त महाराज जी द्वारा प्रदत्त जीवन ही मानती रहीं।

उस वक्त मेरे गाँव के १५-२० लोग आश्रम में कार्य करते थे। लेकिन कहते हैं, ईश्वर प्रेम के भूखे होते हैं। उसी प्रकार महाराज श्री जो कि हमारे लिए ईश्वर तुल्य हैं, ने मात्र हमारी टूटी-फूटी पुरानी झोपड़ी में ही एक पुराने से कम्बल पर आसन जमा कर मेरी पूज्य माता जी को आशीर्वाद दिया, 'जब मैं पुनः यहाँ आऊँगा, यह घर एक अच्छा घर होगा।' महाराज श्री की वाणी हमारे लिए दैववाणी साबित हुई और उनकी विदेश-यात्रा से लौटने पर मेरे गृहस्थ जीवन यापन के साथ-साथ हमारा एक अच्छा मकान बन कर तैयार हो गया।

हमारे गाँव से थोड़ी दूरी पर सौरालिया (भैरव) मन्दिर व सिद्धपीठ कुंजापुरी मन्दिर स्थित हैं। ये दोनों ही हमारे कुलदेवता भी हैं। तत्कालीन प्रथा के अनुसार किसी घर में कोई मांगलिक कार्य सम्पन्न होने पर व अन्य अचल सम्पत्ति अर्जित करने पर तीन वर्ष के अन्दर-अन्दर उपरोक्त कुलदेवताओं के मन्दिरों में पशुबलि जिसमें बकरों की बलि पीढ़ी दर पीढ़ी दी जाती थी। मेरे घर में भी इस प्रथा के पालनार्थ दो बकरे पाले जा रहे थे जिनकी बलि अक्तूबर माह के नवरात्र में दी जानी निश्चित थी। इसके बारे में मैंने महाराज श्री को उपरोक्त रूप से बताया तथा यह इच्छा व्यक्त की कि आप पुनः मेरे घर को अपनी चरणधूलि से पवित्र करने की कृपा करें। महाराज श्री ने बलि न करने के लिए प्रेरित किया तथा महाराज श्री की आज्ञा से मेरे परिवार के अन्य सदस्य भी, जो कि पुराने विचारों से ओत-प्रोत थे, बलि न करने के लिए सहमत हो गये तथा मात्र दुर्गा सप्तशती का सम्पुट पाठ किया गया। महाराज श्री ने इस अनुष्ठान में अन्तिम दिन कुमारी पूजन में स्वयं भाग ले कर हमें आशीर्वाद दिया तथा उनकी वाणी से प्रेरित हो कर सम्पूर्ण गाँव वालों ने बलि-प्रथा समाप्त करने का संकल्प लिया। यह प्रथा बगैर किसी प्रचार-प्रसार के धीरे-धीरे महाराज श्री के आशीर्वाद से पूर्णतः समाप्त हो गयी और व्यक्तिगत रूप से मेरे पूरे परिवार में दो वर्ष तक किसी सदस्य को किसी प्रकार का किंचित् भी कष्ट नहीं हुआ।

पूज्य स्वामी जी के सान्निध्य में रहते हुए कुछ प्रमुख घटनाएँ निम्न प्रकार हैं :

बात उस समय की है जब महाराज श्री आश्रम के महासचिव थे और आश्रम में पानी की व्यवस्था आज जैसी नहीं थी। पण्डित दौलतराम जी गंगा जी से बहँगी द्वारा जलपूर्ति का कार्य करते थे। पानी सीमित मात्रा में मिलता था। महाराज श्री पर आश्रम के कार्य का अत्यधिक भार था और वे कई बार देर रात तक भक्तों को भेजने के लिए पत्र टाइप करते रहते थे। गर्मी के दिनों में महाराज श्री कार्य निपटा कर स्नान कर निद्रा लेना चाहते थे, परन्तु पानी का अभाव अखरता था। इन स्थितियों में कभी-कभी रात में, मैं और मेरा मित्र

कंचन, एक बाल्टी पानी ले आते तो महाराज श्री स्नान कर लेते। उन दिनों महाराज श्री जब कभी हफ्ता-दस दिन के लिए बाहर चले जाते तो कमरे में डाक की ढेर इकट्ठी हो जाती जिनको छाँट कर महाराज श्री सभी भक्तों को जवाब लिख कर भेजते। लिफाफे पर लगे टिकट के आधार पर मैं एवं कंचन, उन लिफाफों को छाँट कर अलग-अलग देश की डाक की अलग-अलग ढेरी लगाते जिसमें शायद हम यह समझते कि हम भी सहयोग कर रहे हैं। इसके पश्चात्, स्वामी जी महाराज हमें कभी-कभी सूखे मेवे (काजू, बादाम, किशमिश, मिश्री आदि) देते, परन्तु हमारा मन नहीं भरता। उक्त मेवे विशेष बर्तनों में रखे रहते थे। एक दिन हम दोनोंह्वह्वमैं और कंचन ने समय पा कर मेवों की चोरी कर ली। जितना महाराज श्री ४-५ दिन में देते, उतना हमने एक बार में निकाल कर खा लिया। महाराज जी ने दूसरे दिन अन्य दिनों की तरह हमें सूखे मेवे दिये। परन्तु आज हाथ में नहीं, सीधे हमारी जेबों में डाले तो हम दोनों बहुत खुश हुए। परन्तु जब पुनः महाराज श्री जेबों में मेवे डालने लगे तो हमें अपने द्वारा किये गये कृत्य का एहसास हो गया और हमारी नजरें नीची हो गयीं और उसी दिन हमने मन में संकल्प लिया कि भविष्य में अब ऐसा कार्य नहीं करेंगे। महाराज श्री का शिक्षा देने का कितना महान् तरीका है।

मैं आश्रम में बढ़ई (कारपेन्टरी) का कार्य करता था। ८ सितम्बर को परम पूजनीय श्री १००८ स्वामी शिवानन्द जी महाराज का जन्मोत्सव मनाया जाना था। उन दिनों वीडियो फिल्मों की जगह मूवी फिल्में बनती थीं। आश्रम का कोई व्यक्ति दो दिन पूर्व फिल्म का मूल्य देहरादून से पूछ कर आया था, जिन्हें ले आने का कार्य मुझे सौंपा गया। मेरे पास मोटर साइकिल थी। संयोग से मुझे दूसरी जगह पचास रुपये कम मूल्य पर फिल्म प्राप्त हो गयी। लेकिन मैंने आश्रम के व्यक्ति द्वारा पूछे गये मूल्य के अनुसार ही बिल बनवा लिया जिसे मैंने आश्रम के तत्कालीन सचिव श्री स्वामी परमेश्वरानन्द जी को दिया। आश्रम से पार्वती कुटीर की तरफ से हो कर जब मैं मोटर साइकिल से नीचे आ

रहा था तो मेरे साथ दुर्घटना घट गयी। मुझे तो चोट नहीं आयी, लेकिन मोटर साइकिल ठीक कराने में मेरे २०० रुपये व्यय हो गये। उस दिन मुझे अपनी करनी पर अत्यधिक ग्लानि हुई। मैं अपनी इस भूल का पश्चात्ताप करना चाहता था। स्वामी जी महाराज की कृपा एवं उनसे मिले स्नेह के कारण मुझे हिम्मत मिली और मैंने निस्संकोच अपनी गलती महाराज जी को बतायी, जिससे महाराज श्री ने भविष्य में ऐसे कृत्य न करने की हिदायत दी। साथ ही यह भी कहा कि तुम पर भगवान् की बहुत कृपा है। स्वामी जी महाराज न जाने किस भगवान् की बात कर रहे थे, लेकिन मैं अपने समक्ष महाराज श्री में ही अपने वास्तविक भगवान् का स्वरूप देख रहा था।

एक बार मुझे महाराज श्री के साथ गुजरात जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। किसी भक्त ने महाराज जी के कार्यक्रमों एवं प्रवचनों की प्रकाशित होने वाली पत्रिका के लिए चित्र लेने हेतु राजकोट के जाने-माने फोटोग्राफर को आमन्त्रित किया हुआ था। परन्तु दो-तीन चित्र लेने के बाद अचानक ही उनके कैमरे में कोई तकनीकी खराबी हो गयी थी जिसके कारण वे बहुत परेशान हो गये। महाराज श्री ने तुरन्त उनकी परेशानी का कारण समझ लिया तथा मुझे अपना कैमरा उन्हें देने को कहा। संयोग से मेरे कैमरे में वही फिल्म (उसी कम्पनी की जो कि उनके कैमरे में लगी थी) थी जिससे वे चित्र लेना चाहते थे, जिसे प्राप्त कर उन्हें अतीव शान्ति मिली तथा फोटोग्राफर महोदय ने मुझे भगवान् के रूप में मिलने की बात कही। उन महोदय की परेशानी का मुख्य कारण महाराज श्री के अमूल्य समय की जानकारी का होना था। इस घटना से मेरी आँखें खुलीं कि मैं महाराज श्री का कितना अमूल्य समय नष्ट करता हूँ। परन्तु यह महाराज श्री का मेरे प्रति ममत्व एवं स्नेह ही था कि उन्होंने मुझे इस विषय में कभी कुछ नहीं कहा और मैं इस तरफ से बिल्कुल अनजान ही रहा।

सन् १९६३ में परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात्, महाराज श्री आश्रम के अध्यक्ष-पद पर आसीन हुए। उसके कुछ दिन पश्चात् नवम्बर माह में, महाराज श्री ने मुझे अपने साथ केदारनाथ ले

जाने की इच्छा व्यक्त की, तो मैंने अपने अग्रज श्री चिरंजीलाल जी की अनुमति प्राप्त कर महाराज श्री के साथ चलने की बात बता दी। बड़े भाई साहब उन दिनों ठेकेदारी का कार्य कर रहे थे। उनके साथ बसन्त खोले पूना (महाराष्ट्र) निवासी मुन्शी का कार्य करते थे। उन्होंने भी महाराज श्री के संग केदारनाथ यात्रा पर चलने का निवेदन किया। इस सम्बन्ध में महाराज श्री से अनुमति ली, तो महाराज श्री ने तुरन्त अनुमति दे कर तीन टिकिट अपर क्लास के ऋषिकेश से श्रीनगर तक के मुझे लाने को कहा। साथ ही यह भी कहा कि मैं लक्ष्मणझूला (सराय) में बस में बैठूँगा, क्योंकि स्वामी जी महाराज ने अपनी यह यात्रा गुप्त रखी थी। सम्भवतया इस यात्रा की जानकारी सिर्फ श्री नागराजन जी (श्री स्वामी विमलानन्द जी) को ही दी थी। उस दिन हम लोग श्रीनगर टूरिस्ट बँगले में रहे। दूसरे दिन प्रातः बस द्वारा रुद्रप्रयाग गये; क्योंकि उन दिनों केदारनाथ के लिए ऋषिकेश से सीधी बस सिर्फ रुद्रप्रयाग तक के लिए ही उपलब्ध होती थी, क्योंकि रुद्रप्रयाग में मोटर पुल निर्माणाधीन था। उस पार दो बसें उतार रखी थीं जो फिर मात्र कुण्डचट्टी तक ही सीमित थीं। उसके बाद मोटर रोड गुप्तकाशी के लिए बन रही थी। कुण्डचट्टी से पैदल यात्रा करनी थी। हम लोग कुण्डचट्टी से गुप्तकाशी चले गये। रात्रि-निवास गुप्तकाशी में काली कमली धर्मशाला में किया। प्रातः लक्ष्मणझूला की एक गुफा में निवास करने वाले भोलागिरि नाम के एक साधु, जो कभी-कभी आश्रम में महाराज श्री की चरण-वन्दना करने आया करते थे, वे भी हमारे साथ सम्मिलित हो गये। इस प्रकार अब हम चार लोग हो गये थे। महाराज जी ने मुझे आज्ञा दी कि इनका भोजन केदारनाथ तक अपने साथ ही करवाना है। हम लोग एक-एक पिट्ठू व कम्बल साथ लिये थे। महाराज जी ने स्वयं एक कम्बल, एक शाल अपने कन्धों से लटकाये बाँध रखा था। इस प्रकार हम लोगों ने तीसरे दिन सोनप्रयाग में रात्रि-विश्राम किया। अगले दिन जब हम रामबाड़ा पहुँचे तो वहाँ बारिश प्रारम्भ हो गयी और आगे का रास्ता पूरा बर्फ से ढक गया। रास्ते का कोई ज्ञान नहीं हो रहा था, केदारनाथ यात्रा अभी चार कि.मी. से अधिक शेष थी। श्री भोलागिरि गरुड़चट्टी में ही रुक गये थे। कुछ समय पश्चात् दो घोड़े वाले ऊपर

से आये, उन्होंने हमारा मार्गदर्शन किया कि आप लोग घोड़े के पैरों के चिह्नों को देखते हुए चलें। रात पड़ने लगी थी। स्वामी जी के पास टार्च थी। उसकी ही रोशनी में चलते-चलते, हम लोग रात ९.३० बजे केदारनाथ पुरी पहुँच गये। यात्रा सत्र समाप्त हो चुका था, अतः केदारनाथ धाम में सन्नाटा छाया हुआ था। काली कमली धर्मशाला दो दिन पूर्व बन्द हो चुकी थी, क्योंकि अगले दो दिन बाद केदारनाथ जी की डोली नीचे ऊखीमठ अगले यात्रा सत्र तक के लिए जाने वाली थी। हम एक मकान के आगे पहुँचे, जहाँ किवाड़ तो बन्द थे परन्तु अन्दर से आदमियों के बात करने की आवाज आ रही थी। मैंने उनके किवाड़ को खटखटाया। अन्दर से आवाज आयी ''आप लोग कौन हैं?'' मैंने कहा, ''यात्री हैं।'' जवाब मिला, ''कैसे यात्री, अब तो यात्रा भी समाप्त हो चुकी है, परसों कपाट बन्द हो जायेंगे। कैसे यात्री?'' किवाड़ खुला। मैंने कहा कि हम तीन व्यक्ति हैं। हमारे रहने की व्यवस्था कर दीजिए। पण्डा श्री, जिन्होंने अपना शुभ नाम मथुराप्रसाद तिवाड़ी बताया, की स्वीकृति पर महाराज सहित हम तीनों ने उनके कमरे में प्रवेश किया। कमरे के बिल्कुल मध्य में हवन कुण्ड जैसे आकार के स्थान पर लकड़ियों का अलाव जल रहा था। उस वक्त केदारनाथ में बिजली की व्यवस्था नहीं थी।

हम लोगों ने ठण्ढ की वजह से आग तापने की इच्छा जाहिर की, क्योंकि करीब ३-४ कि.मी. बारिश और बर्फ में ही चल कर आये थे। परन्तु पण्डा जी ने आग तापने से मना कर हम लोगों को एक कटोरी में शुद्ध देशी घी गर्म कर हाथ और पैरों में मलने को कहा और वे स्वयं महाराज श्री जी के हाथों और पैरों में घी मलने लगे, आज शायद पण्डा जी के अपने जीवन पर्यन्त की केदारनाथ के चरणों की तपस्या पूर्ण हो चुकी थी कि महाराज श्री जी के रूप में साक्षात् भगवान् केदारनाथ आज उनके घर में प्रविष्ट हो गये थे। वे किसी प्रकार के परिचय के बिना ही अन्दर ही अन्दर यह महसूस कर रहे थे कि आज तेरी कुटिया पर महान् महापुरुष का पदार्पण भगवद् स्वरूप एक सन्त के रूप में हो

गया है और वे अपने को धन्य समझ रहे थे। इधर महाराज जी ने मुझे किसी को भी सही-सही पता बताने को मना किया हुआ था। लेकिन फिर सुबह पण्डा श्री मथुराप्रसाद जी ने मुझे कहा कि आप लोग बतायें न बतायें, परन्तु मुझे एहसास हो रहा है कि मेरे यहाँ अवश्य ही महान् सन्त पधारे हैं और मेरा सौभाग्य है कि मुझे उनकी सेवा का अवसर मिल रहा है। वास्तव में पण्डा जी महान् भाग्यशाली थे जिन्हें महाराज श्री ने उन्हीं के घर दर्शन दिये।

महाराज श्री जी ने पण्डा जी के ज्यादा पूछने पर स्वयं सिर्फ इतना ही बताया कि हम लोग ऋषिकेश से आये हैं और वहाँ पर गुरुमहाराज का आश्रम है और आश्रम में मुझ जैसे कई साधु लोग रहते हैं। लेकिन आज पण्डा जी पर भगवान् केदारनाथ भी खुश थे। वे सब समझ रहे थे। उन्होंने हम लोगों के खाने व रहने की बहुत अच्छी व्यवस्था की थी। लेकिन ठण्ढ इतनी अधिक थी कि रजाइयाँ अत्यधिक होने की वजह से उनका वजन तो अधिक हो गया था, परन्तु ठण्ढ फिर भी नहीं गयी।

प्रातः जागने पर हमने देखा कि बाहर बर्फ की चादर बिछी है तथा हम लोगों की आँखों पर कुछ जोर सा पड़ने लगा। महाराज श्री जी के पास एक धूप का चश्मा था जिसको हम सबने पहन कर बारी-बारी से बाहर का दृश्य देखा। कुछ घण्टों के बाद केदारनाथ पुरी में तेज धूप हो जाने की वजह से वहाँ की बर्फ अब कम हो गयी थी। प्रातः श्री केदारनाथ जी के दर्शन के पश्चात्, हम लोगों ने एक वृद्ध फलाहारी बाबा जी, जो कि बारह महीने वहीं रहते थे, के दर्शन किये।

श्री केदारनाथ धाम में दो रात्रि निवास करने के पश्चात्, हम लोगों ने दोपहर बाद गौरीकुण्ड पहुँच कर रात्रि-विश्राम किया। मैं और बसन्त एक कमरे में तथा महाराज श्री जी दूसरे कमरे में सोये। रात्रि ११-१२ के आस-पास अचानक बसन्त जी का पेट खराब हो गया जो कि पूरी रात्रि रहा। सुबह तक उनकी हालत काफी दयनीय हो चुकी थी और अब वे पैदल चलने की स्थिति में नहीं थे। यह सब बात जब मैंने महाराज श्री जी से कही तो महाराज श्री जी ने

मुझे तुरन्त फाटा तक घोड़े की व्यवस्था करने को कहा, व्यवस्था होने पर स्वामी जी ने एक पत्र फाटा अस्पताल के डाक्टर को लिख कर दिया और हम लोगों ने बसन्त जी को फाटा भेज दिया।

महाराज श्री जी ने और मैंने गौरीकुण्ड में स्नान किया और एक चाय की दुकान में गये जो कि एक अच्छे होटल जैसी लग रही थी। मैं अपने लिए भोजन की व्यवस्था पूछने लगा। वहाँ पर श्री गवरसिंह कण्डारी जी, जिन्हें कि मैं जानता था, बैठे थे। श्री कण्डारी जी उन दिनों वहाँ पर रोड कटिंग की ठेकेदारी कर रहे थे। वे मुझसे बात करने लगे तथा स्वामी जी महाराज के बारे में जान कर अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होंने उस होटल में अपने ही हाथों से रोटियाँ बनायीं। उनका महाराज श्री जी को रोटियाँ खिलाने का मन था। परन्तु महाराज श्री जी तो रोटियाँ नहीं खाते थे। वे बिस्किट, हार्लिक्स वगैरह लेते थे। परन्तु आज तो गवरसिंह जी भी जैसे कुछ अमूल्य प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा लिये हुए थे, इसलिए उन्होंने महाराज श्री जी से आग्रह किया कि वे रोटी खा लें। उनके प्रेमपूर्ण आग्रह पर महाराज श्री जी ने दो छोटे-छोटे फुलके खा कर उन्हें भी धन्य किया।

हम लोग शाम को गौरीकुण्ड से फाटा पहुँचे, तो बसन्त जी की तबीयत अब कुछ ठीक हो गयी थी, लेकिन काफी कमजोरी आ गयी थी। डाक्टर से पूछने पर पता चला कि उन्हें हिल डायरिया हो गया था और ये कुछ दिनों बाद स्वस्थ हो जायेंगे और हम इन्हें यहाँ से छुट्टी दे देंगे। दूसरे दिन जब स्वामी जी और मैं फाटा से सुबह ही चलने को तैयार हुए तो बसन्त जी रोने लगे, अतः फाटा से कुण्ड तक पुनः बसन्त जी के लिए घोड़ा किया और रात्रि-विश्राम हेतु हम लोग अब गौरीकुण्ड आ गये। वहाँ पर मैंने बसन्त जी के लिए खिचड़ी बनवायी थी। हम दोनों ने वही खायी।

अगले दिन गौरीकुण्ड से चल कर हम लोगों ने श्रीनगर में ही रात्रि-विश्राम किया। फिर प्रातः श्रीनगर से ऋषिकेश के लिए प्रस्थान किया। सराय (लक्ष्मणझूला) में मार्ग पर श्री नागराज जी (श्री स्वामी विमलानन्द जी)

महाराज श्री की प्रतीक्षा में खड़े थे। महाराज श्री जी उनके साथ लक्ष्मणझूला मार्ग से गौरी कुटीर, स्वर्गाश्रम में जज साहब को मिलने चले गये और हम लोग अपने निवास गुप्ता बिल्डिंग (वर्तमान में 'गुरु-निवास') में चले गये।

महाराज श्री जी सन् १९५७-५८ में छः माह बद्रीनाथ में रहे। उस वक्त स्वामी जी जब कभी ज्यादा दिन के लिए कहीं जाते, उस बीच अवश्य ही मेरी विनती पर मुझे पत्र लिखते थे। वर्ष १९५८ में स्वामी जी महाराज ने बद्रीनाथ से मुझे एक पत्र लिखा था, जो आज भी मेरी फाइल में सुरक्षित रखा है। मेरे ज्येष्ठ भ्राता श्री सोहनलाल जी उन दिनों बीमार चल रहे थे; परन्तु महाराज श्री जी उधर बद्रीनाथ में उन बीमार, गरीब और दुःखी लोगों के प्रति उतना ही सावधान और सक्रिय थे, जितना आश्रम में रहते हुए, उपरोक्त लोगों की सेवा में सक्रिय रहते थे। महाराज श्री जी ने मुझे उस पत्र में आग्रह किया कि डाक्टर अध्वर्यु साहब वीरनगर, राजकोट (गुजरात) वाले आश्रम आने वाले हैं, उनके साथ भाई को उचित उपचार हेतु भेज देना। डाक्टर साहब को स्वामी जी महाराज पहले ही पत्र लिख चुके थे।

अन्त में, मैं उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि परम पूज्य महाराज श्री का आशीर्वाद, प्रेम एवं कृपा मुझ जैसे कोटि-कोटि लोगों पर सदा सर्वदा बने रहें। इसी प्रार्थना के साथ, परम पूजनीय माँ स्वरूपी महाराज श्री जी के चरणों में अपना सुरेशा का कोटि-कोटि प्रणाम!